विद्या की देवी सरस्वती

गोपीनाथ पारीक 'गोपेश'
अध्यक्ष, साहित्य सरोवर संस्था, जयपुर

देवीभागवत के पैंतालीसवें अध्याय में सरत्व का अर्थ सरण शीलता किया गया है और इस सरत्व को प्रदान करने वाली देवी सरस्वती है। सदा सरस रहने के कारण भी इन्हें सरस्वती कहते हैं। ये शरत् कालीन पूर्णिमा की शुभ्र कान्ति जैसा वर्ण रखने वाली हैं, अतः इनका नाम शारदा है। वस्तुतः यह सारा दृश्य एवं अदृश्य जगत् बस एक सच्चिदानन्दघन परमानन्दमय ब्रह्म से ही परिपूर्ण है। उन मङ्गलमय परमात्मा की सत्त्वस्था अभिन्ना शक्ति ही शुभ्रा, शारदा, सरस्वती, भारती आदि नामों से जानी जाती है।

भारतीय वाङ्मय की देवता सरस्वती सरस् में झील में रहती है। अतः हंस उनका वाहन है। उसी पर बैठ कर वह तैरती रहती है। उनके हाथों में वीणा है। इस वीणा के मधुर स्वर गूंजते रहते हैं। मूल तत्त्व ध्वनि है। यह ध्वनि एक अनन्त समुद्र है। वाणी सरस्वती है। वर्णमाला वीणा है। उससे निकलने वाले स्वर वाङ्मय कहे जाते हैं। शब्द वक्ता के भावों से कभी मलिन नहीं होते, अतएव सरस्वती का सब कुछ धवल है।

देवों में सर्वप्रथम गणेश जी की पूजा की जाती है, वे ही बुद्धिविधाता हैं। किन्तु बहुत से विद्वानों का मत है कि सरस्वती की वन्दना सर्वप्रथम की जानी चाहिये, क्योंकि यह वाणी की देवी है और बिना वाणी के गणेश जी की भी वन्दना नहीं की जा सकती। तभी तो महाकवि भक्तप्रवर तुलसी ने गणेशजी की वन्दना से पहले वाणी (सरस्वती) की वन्दना की है-

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणी विनायकौ।। - रा.च.मानस

इस प्रकार शास्त्रों के अनुसार सरस्वती समस्त आध्यात्मिक अनुष्ठानों की, समस्त देवोपासना की तथा समस्त ज्ञान-विज्ञान के आयामों की अधिष्ठात्री है। इसकी आराधना के बिना अन्य सभी आराधनायें परिपूर्ण नहीं हो पातीं। सरस्वती की पूजा हमारी सभ्य संस्कृति, प्राचीन ज्ञात पूर्वजों की परम्परा एवं गौरवशाली इतिहास से भी हमें जोड़ने का काम करती है। सिन्धु-सरस्वती तट पर बसे हमारे वैदिक काल के पूर्वज सरस्वती नदी को ही माता सरस्वती का लौकिक रूप मानते थे और पूजते थे। इसके ही तट पर जो उपनिषदों के मंत्र गूंजते थे, वे सम्पूर्ण आर्यावर्त को आलोकित करते थे।

'काव्यकौतुक' के लेखक आचार्य भट्ट तौत ने चिन्तन की चार कोटियाँ स्वीकार की हैं - स्मृति, बुद्धि, मति और प्रज्ञा अथवा प्रतिभा। स्मृति वह चिन्तन शक्ति हैं, जो अतीत का स्मरण कराती है। बुद्धि प्रत्यक्ष का ज्ञान कराती है। मति का प्रसार भविष्य के प्रति होता है। चतुर्थी चिन्तनशक्ति प्रज्ञा किंवा प्रतिभा कालातिक्रान्त होती है। इसी प्रतिभा के बल पर कवि कालाजयी मौलिक काव्य की रचना करता है। प्राज्ञ होना, प्रतिभाशाली होना बड़े सौभाग्य की बात है जिसे संस्कृत के काव्यकारों ने विस्तृत रूप से व्याख्यायित किया है। ये सब चिन्तन की योग्यतायें माता सरस्वती की कृपा से ही प्राप्त होती हैं, अत एव प्रत्येक चिन्तक मनीषी इस माता से यही याचना करता है-

मेरे मस्तक निज कर धर दो,
माँ मोपै यह करूणा कर दो।
जीवन सार्थक हो कल्याणी
भारती भव्यभावना भर दो ।।

'मयूरपृष्ठं समधिवसन्ती' के अनुसार कहीं इस माता का वाहन मयूर कहा गया है। तब ही तो सरस्वती के संवाहकों का समादर करते हुए सरस्वतीवाहक मोर के पंख को भगवान् श्रीकृष्ण अपने मस्तक पर धारण करते हैं।

कहते हैं, कि सबसे पहले श्रीकृष्ण भगवान् ने ही माघ शुक्ला पञ्चमी को सरस्वती पूजन किया था। तब से सरस्वती पूजन का प्रचलन वसन्तपञ्चमी के दिन होने लगा। विद्या, काव्य, कला और संगीत की देवी सरस्वती इसी दिन ब्रह्मा के मानस से अवतीर्ण हुई थी, अतः यह वसन्तपञ्चमी सरस्वती जन्मोत्सव के रूप में धूमधाम से मनाया जाता है। 'चैत्र-वैशाखयोः वसन्तः' इस शास्त्रकथन के अनुसार चैत्र और वैशाख माह ही वसन्त ऋतु के हैं, किन्तु माघ पञ्चमी से ही वसन्त की बाट जोहने लगते हैं। प्रकृति भी इन्हीं दिनों से वसन्त ऋतु के आगमन की सूचना देने लगती है। मकर संक्रान्ति से भगवान् सूर्य उत्तरायण हो जाते हैं, तब से ही वसन्त के कदमों की आहट सुनायी देने लगती है। इन्हीं कारणों से माघ शुक्ला पञ्चमी को वसन्त पञ्चमी कहा जाता है। इस पञ्चमी से ही वसन्तोत्सव प्रारम्भ हो जाता है। वसन्त का जो भौतिक रूप मनभावन लगता है, वहीं इसका आध्यात्मिक रूप अधिक सुहाना होता है। इस सुहाने रूप को पाने के लिये सरस्वती की कृपा आवश्यक है। इनकी कृपा पा कर ही सरस्वती के उपासकों में सद्भावों की सद् विचारों की सृष्टि होती है, जिससे वसन्त में खिले पुष्पों की भाँति मन भी प्रसन्न रहता है। फिर इसके अनुग्रह से मनुष्य देवत्व को प्राप्त कर लेता है -

सरस्वतीं च तां नौमि वागधिष्ठातृदेवताम् ।
देवत्वं प्रतिपद्यन्ते यदनुग्रहतो जनाः।।